पूज्य लालचंदभाई का प्रवचन
प्रवचन नंबर: ४ a, ता. १७-८-१९८७.
श्री समयसार, गाथा ३५६ - ३६५, सेटिका की गाथा

Version 1

(This pravachan continues from Pravachan 3)

श्रोताओं को साथ रखकर, उसे कोई विचार करना नहीं है। श्रोताओं को खड़ा रखते हैं कि चलो बैठो, अपन चर्चा करते हैं। चूना सफेद है कि भींत (दीवार) सफेद है? अपन विचार करते हैं। आहाहा! जीतुभाई! अपन साथ बैठकर विचार करते हैं। ऐसा है कि खड़ा रखे न तो सुनने तो बैठे। 'तू गलत है, दीवार सफ़ेद नहीं है' (यदि ऐसा कहें) तो वो भाग जाय। तो भाग जाये, वो भी ज्ञानी को स्वीकार्य नहीं और गलत माने वो भी सहनीय नहीं। सच माने वो स्वीकार्य है। तो सुने तो सच माने। कोई तो पकड़ेगा न, सभी न पकड़ें तो कुछ नहीं।

विचार करते हैं.., ऐसा कहते हैं। '**यहाँ विचार किया जाता है:-**', विचार किया जाता है। '**यदि कलई...**' अर्थात् चूना, '**दीवार-आदि परद्रव्य की हो तो...**' , अर्थात् दीवार सफेद हो गई हो '**तो क्या हो...**' ये अपन विचार करते हैं। कारण कि तू कहता है कि दीवार सफेद हो गई है। 'तुम गलत हो'- ऐसा उन्होंने नहीं कहा। बैठ, विचार करते हैं अपन। विचार करते हैं, दोनों परस्पर विचार करते हैं। फिर अंत में तुम्हें उचित लगे तो हमारी बात सच्ची मानना। विचार करते हैं। आहाहा!

ज्ञानी किसी का तिरस्कार नहीं करते। कहेंगे आगे। ज्ञानी तो भाई, आहा! वो तो करुणा के सागर हैं। करोड़पति आया हो तो उसको नहीं कहते कि कहाँ से आये हो और क्या? परन्तु मैले-कुचैले कपड़ोंवाला कोई हो, थका हुआ हो, हिंदीभाषी भाई पांच सौ किलोमीटर दूर से आया हो, मैला-कुचैला एकदम, दाढ़ी रखी हुई हो। आये दर्शन करने के लिए, "भाई!" ऐसे प्रेम से (कहे), "भाई! कहाँ से आते हो?" इतने में तो उसकी थकान उतर जाती है!

(उसको ऐसा लगता है कि) आहा! ऐसे महापुरष! हम तो जानते (नहीं) थे कि वहाँ कैसा होगा और दर्शन करने जायेंगे तो अनुमति लेनी पड़ती होगी न? क्या होगा? ये तो हमने जितनी बातें सुनी थी, वो सब झूठी (निकली)! ये महापुरष तो कहते हैं कि, "भाई...! कहाँ से आते हो?" तहाँ तो उसका सवासेर खून बढ़ जाता है! हमारी गुजराती भाषा में। कि इस गाँव से हम आते हैं। "दोपहर को तीन से चार व्याख्यान है हों! सुनना।" वाह! सत्कार दिया। आनेवाले को, मुमुक्षु जीव को सत्कार दिया। क्योंकि सभी आत्मा भगवान हैं। आहाहा! किसी को पर्याय से मत देखो। (कोई) स्त्री नहीं है और पुरुष भी नहीं है। कोई धनवान नहीं है और कोई गरीब भी नहीं है। कोई राजा या रंक नहीं है, सभी आत्मा भगवान हैं। सुनने के लिए आया है तो कुछ भी दो शब्द लेकर अपने गाँव जायेगा। खाली हाथ आया है, खाली मुट्ठी से आया है और भरी मुट्ठी से जायेगा। जन्मता है तब, आहाहा! आया था खाली मुट्ठी, खाली हाथ और कुछ भी तत्व लेकर जायेगा।

इसलिए आचार्य भगवान कहते हैं कि चलो विचार करते हैं, बैठो। बिठाते हैं अब उसे। अज्ञानी जीव को बिठाते हैं। चलो विचार करते हैं। '**यदि कलई**...', तुझे ऐसा लगता है कि दीवार सफेद हो गयी, तो चलो विचार करते हैं। '**यदि कलई दीवार आदि परद्रव्य की हो तो क्या हो वह प्रथम विचार करते हैं:- 'जिसका जो होता है वह वही होता है,...'** महासिद्धांत! आहाहा! '**जिसका जो होता है वह वही होता है,...'** जैसे कि सफेदी चूने की होने से सफेदी वह चूना ही है। खट्टापन नीम्बू का होने से खट्टापन वह नीम्बू ही है। कि दाल है? दाल में डाला हुआ नीम्बू, दाल में डाला हुआ नीम्बू। जो खट्टापन है वो दाल का है कि नीम्बू का है? सच बोलना सभी। दाल खट्टी नहीं है? नहीं। दाल खट्टी नहीं है तो दीवार सफेद नहीं है। तो ज्ञान पर को जानता नहीं है। आहाहा! वहां सभी को ले जाना है। कहने में आता है कि दाल खट्टी है, पर वास्तव में दाल खट्टी नहीं है, सब्ज़ी खट्टी नहीं है। नीम्बू खट्टा है।

'**जिसका जो होता है वह वही होता है**,...' महासिद्धांत! आहाहा! मिठास गुड़ की होने से, हो जाने से नहीं। मिठास गुड़ की होने से, हो जाने से नहीं, होने से। मिठास वह गुड़ ही है। मिठास वह गुड़ ही है। अब मिठास तो एक उसका असाधारण गुण था। किन्तु गुण पर से गुणी पर ले गये। मिठास गुड़ की होने से, मिठास वह गुड़ ही है। मिठास पर से गुड़ पर ले गये। मिठास पर से (गुड़ पर ले गये)। इसप्रकार आत्मा का ज्ञान होने से, आत्मा का ज्ञान हो जाने से नहीं। आत्मा का ज्ञान होने से सभी आत्मा को आत्मा का ज्ञान होता है। सभी आत्माओं को वर्तमान में, कुत्ते, बिल्लियों को, एकेन्द्रिय, दो इन्द्रिय को, निगोद के जीवों को जो ज्ञान प्रगट होता है, वह ज्ञेय का नहीं परन्तु ज्ञायक का है, आत्मा का है। '**जिसका जो होता है वह वही होता है,...'** महासिद्धांत!

अब '**जिसका जो होता है वह वही होता है,...'** कोई शक्कर का दृष्टांत लेता है, कोई नीम्बू का दृष्टांत लेता है। दृष्टांत भी आत्मा का देते हैं। दृष्टांत भी आत्मा (को समझने के लिए है)। क्योंकि नीम्बू और गुड़ है न, वह तो क्षणिक पर्याय है। वह तो मूल द्रव्य नहीं है। इसलिए वह तो बदल जाती है। गुड़ हो वह अफीम बन जाये और अफीम हो वह गुड़ हो जाये। वरना गुड़ और अफीम, ये तो पर्यायार्थिक नय का विषय है। यहाँ तो कहते हैं कि, दृष्टांत में ऐसा देते हैं कि..., समझाना है आत्मा और दृष्टांत देते हैं आत्मा का। परन्तु समझाना है आत्मा तो दृष्टांत आत्मा का कैसे? कहते हैं कि तुझे समझ आयेगा। तुझे समझ आयेगा।

'**जैसे...**', जैसे अर्थात् दृष्टांत। '**जैसे आत्मा का ज्ञान होने से...**', ज्ञान हो जाने से नहीं। आहाहा! आत्मा ज्ञानमय है। और आत्मा में आत्मा का ज्ञान प्रगट होता ही रहता है। और प्रगटा हुआ ज्ञान आत्मा को प्रसिद्ध करता रहता है। आत्मा में से आत्मा का ज्ञान प्रगट होता है। ये ज्ञान आत्मा के साथ तन्मय है। इसलिए ये ज्ञान आत्मा को प्रसिद्ध करते हुए उदयरूप होता है। इसलिए कहते है कि '**जैसे आत्मा का ज्ञान होने से...',** आत्मा का पैसा है और आत्मा का देह है? शरीर है? ये मकान, ये नया बनाया वह मीठाभाई का मकान है? आहाहा! वह तो पुद्गल का है। वह कहाँ उनका है। '**जैसे आत्मा का ज्ञान होने से ज्ञान वह आत्मा ही है**।' वह पर्याय है कि द्रव्य है? यहाँ पर ज्ञान अर्थात् त्रिकाली नहीं लेना। किन्तु आत्मा का ज्ञान होने से, जो प्रगट होता हुआ ज्ञान जिसे लक्षण कहने में आता है वह आत्मा का है। ज्ञान शास्त्र का नहीं होता। ज्ञान प्रतिमाजी का नहीं होता। प्रतिमाजी का ज्ञान ही

नहीं होता है। ज्ञान तो आत्मा का ही होता है। किन्तु प्रतिमाजी का निमित्त देखकर प्रतिमाजी का ज्ञान हुआ, ऐसा व्यवहार करने में आता है। तो चलो विचार करते हैं, कि ज्ञान प्रतिमाजी का हुआ है या आत्मा का? बोलो।

हैं? ये क्या? मैं रोज दर्शन करने जाता हूँ तो प्रतिमाजी तो मुझे जानने में आती है। आहा! ये तेरी थोड़ी-सी भूल है। होता है निज प्रतिमा का ज्ञान और भासित होता है उसका ज्ञान। आहाहा! समझने जैसी बात है। समझ में आये ऐसी है। समझेगा इसलिए शास्त्र लिखा है या नहीं समझे इसलिए? भले थोड़ा समझे। उसकी कोई बात नहीं। पर समझेगा इसलिए शास्त्र लिखे गये न? या कोई नहीं समझेगा इसलिए शास्त्र लिख डाले? जरा सूक्ष्म तो है। विषय थोड़ा सूक्ष्म तो है। पर यहाँ तत्व की रूचि वाले जीव हैं इसलिए समझ में आयेगा। न समझ में आये ऐसा कुछ नहीं है।

'जैसे आत्मा का ज्ञान होने से ज्ञान वह आत्मा ही है।' वह पर्याय नहीं है। ज्ञान वह आत्मा ही है, अभेद कर दिया। अभेदनय से उस पर्याय को आत्मा कहा जाता है। भेदनय से पर्याय है। पर पर्याय दिखती है तब तक आत्मा नहीं दिखेगा। ज्ञेय दिखते हैं तब तक तो आत्मा नहीं दिखेगा। किन्तु पर्याय जानने में आयेगी तब तक जाननहार जानने में नहीं आयेगा। और जहाँ जाननहार जानने में आयेगा वहां पर्याय नहीं दिखेगी। वह पर्याय स्वयं आत्मा हो जाती है। अनुभूति स्वयं आत्मा हो जाती है। श्रुतज्ञान आत्मा होता है। धीरे धीरे अपन लेंगे तो समझ आयेगा। बाकी इसमें कुछ नहीं। नहीं समझ आयेगा, ये (मान्यता) तो निकाल देना। नहीं समझ आयेगा, ये (मान्यता) तो निकाल देना। आत्मा को नहीं समझ में आयेगा तो किसको समझ में आयेगा। आहाहा! **'जैसे आत्मा का ज्ञान होने से ज्ञान वह आत्मा ही है।...'** ये पर्याय की बात करते हैं। गुण की बात नहीं है। गुण की बात करके गुण को आत्मा कहना, वह दृष्टि के विषय में अभेद करके आत्मा कहा। वह ज्ञान-लक्षण ले लिया।

यहाँ तो पर्याय ज्ञायक को जानती है इसलिए पर्याय वह आत्मा है, ज्ञायक हो जाती है। पर्याय रहती नहीं। आहाहा! **'जैसे आत्मा का ज्ञान होने से ज्ञान वह आत्मा ही है (-पृथक् द्रव्य नहीं)**;' लो! ज्ञान और आत्मा भिन्न नहीं हैं। जैसे सफेद और चूना- ये दो वस्तु हैं कि एक? एक ही वस्तु है। सफेद कहो कि चूना कहो, दोनों एक ही वस्तु है। गुण भेद से उसे सफेद कहा जाता है और अभेद से उसे चूना कहा जाता है। इसीतरह गुण भेद से जो ज्ञान की पर्याय आत्मा को प्रसिद्ध करती है, उसे ज्ञान की पर्याय भी कहने में आता है और अभेद से उसे आत्मा कहने में आता है। आहाहा!

वह ज्ञान की पर्याय जानने में आती है, वह व्यवहार है और उस ज्ञान की पर्याय में पर पदार्थ जानने में आते हैं वह अज्ञान है। हाय! हाय! व्यवहार गया हमारा? कहते हैं तेरा व्यवहार होता नहीं तुझे। आहाहा! महा अपूर्व समयसार शास्त्र है। ऐसे कोई अलौकिक क्षण में यह शास्त्र लिखा गया है, कि जो आज तक कई जीवों को सम्यग्दर्शन में मुख्यरूप से निमित्त हुआ है। पूज्य गुरुदेव को यह शास्त्र निमित्त हुआ ये तो हम सभी जानते हैं। किन्तु पूर्व में टोडरमलजी साहब, राजमलजी, बनारसीदासजी, दीपचंदजी अनेक अनेक विद्वान, ज्ञानी हो गए, उनको समयसार शास्त्र निमित्त हुआ है। कोई अतिशय है। इस शास्त्र में कोई अतिशय है। हे ग्रंथाधिराज! तेरे में भाव ब्रह्मांड के भरे.. आहाहा! ग्रंथाधिराज, ग्रन्थ नहीं पर ग्रन्थ का अधिपति। आहाहा! हे ग्रंथाधिराज! तेरे में भाव ब्रह्मांड के

भरे! और मेरे में भी भाव ब्रह्मांड के भरे (हैं)- ऐसा तूने बताया और मैंने जाना, तो मेरे में भी भाव ब्रह्मांड के हैं, ऐसा अनुभव में आया। आहाहा!

'जैसे आत्मा का ज्ञान होने से ज्ञान वह आत्मा ही है...', पर्याय नहीं। सफेद है वह चूना ही है। सफेद है वह उसकी पर्याय है, ऐसा कहना वो व्यवहार है। पर वो व्यवहार भी अभूतार्थ है। उसे भी अभेद करके चूना तो चूना ही है। पृथक् द्रव्य नहीं। द्रव्य और पर्याय एक है, एक सत्ता। द्रव्य से पर्याय भिन्न नहीं है। दृष्टि (की) अपेक्षा से भिन्न और ज्ञान (की) अपेक्षा से अभिन्न। ये स्याद्वाद है, ये अनेकांत है। आहा!

'ऐसा तात्विक सम्बन्ध...', लो! ऐसा तात्विक सम्बन्ध। जिसका जो होता है वह वही होता है। जैसे ज्ञान आत्मा का होने से ज्ञान वह आत्मा ही है। ये उसका तात्विक सम्बन्ध। अंदर का सम्बन्ध उसको तात्विक सम्बन्ध कहने में आता है। बाहर के साथ सम्बन्ध किया, वह व्यवहार भी नहीं किन्तु अज्ञान है। निश्चय जानने के बाद व्यवहार आता है, वो बाद की बात है। आहाहा!

'ऐसा तात्विक सम्बन्ध जीवित (अर्थात् विद्यमान) होने से...', विद्यमान होने से अनादिअनंत। ये सम्बन्ध छूटता ही नहीं। आत्मा का ज्ञान कभी आत्मा से भिन्न पड़ सकता नहीं। और जो भिन्न पड़ता है वो आत्मा नहीं है। शरीर जुदा पड़ता है इसलिए शरीर आत्मा नहीं। कर्म जुदा हो जाते हैं इसलिए कर्म आत्मा नहीं। पुण्य-पाप के परिणाम का अभाव होता है इसलिए वो आत्मा नहीं है। पर आत्मा का ज्ञान और आत्मा, ये कभी भिन्न पड़ सकते नहीं। चूना और चूने का सफेद स्वभाव, ये कभी जुदा हो सकते नहीं। दीवार भिन्न पड़ सकती है किन्तु चूने का सफेद भाव वो चूने के साथ तन्मय है। उसीप्रकार आत्मा और आत्मा का ज्ञान वो तादात्म्य है। तन्मय है। इसलिए ज्ञान वह आत्मा का है।

बोलो परम उपकारी श्री सद्गुरु देव की जय हो!

ॐ